अलक्ष्यक्रमव्यंग्य Contd.

असंलक्ष्य का तात्पर्य है- न संलक्ष्य अर्थात् अच्छी प्रकार से अनुभव में आने वाला जिसका क्रम अर्थात् 'प्रतीति' का पौर्वापर्य है, वह विवक्षितान्य परवाच्य ध्वनिभेद है। इसमें 'आदि' पद रस, भाव के साथ रसाभास, भावशांति, और भावशबलता को भी गिना जाता है।

यहाँ पर जो व्यंग्य की प्रतीति होती है, वह विभाव, अनुभाव, व्यभिचारी संयोग-पूर्विका ही होती है, अतएव इनके संयोग में क्रम तो अवश्य ही होता है- पर वह 'उत्पल शतपत्र भेद न्याय' से ~~अच्छा~~ सहसा समझ में नहीं आता।

अर्थात् जैसे सौ पंखुड़ियों वाले कमल को यदि किसी सुई आदि से छेदा जाए तो छेदन की क्रिया प्रत्येक पंखुड़ी के क्रम से ही प्रयुक्त होती है, पर वह क्रिया इतनी शीघ्रता से होती है कि प्रत्येक पंखुड़ी के भेदन का क्रम समझ में नहीं आता। इसी प्रकार विभाव, अनुभाव, संचारीभाव आदि के संयोग से रसादि-प्रतीति होती है, चूंकि इस संयोग में क्रम अवश्य रहता है अतएव रसादि में भी सूक्ष्म प्रतीति-क्रम होता ही है, किन्तु यह सहसा अनुभव में नहीं आता। इसीलिए इसे 'अक्रमव्यंग्य' न कहकर 'अलक्ष्यक्रमव्यंग्य' या असंलक्ष्यक्रम-व्यंग्य ही कहा जाता है।

रस निरूपण - रस-प्रस्थान के प्रवर्तक भरतमुनि हैं। काव्य में मुख्य-तत्व या 'आत्मा' के रूप में किसी उपादान को रखा जा सकता है, वस्तुतः इसी प्रश्न पर प्रस्थान-भेद या संप्रदायों में विभाजन हुआ है। कुछ आचार्य तो किसी न किसी संप्रदाय से जुड़े हैं,

कुछ व्यापक दृष्टि रखने वाले भी हैं - तदनुसार काव्य में रस, अलंकार, रीति, ध्वनि वक्रोक्ति या औचित्य को प्रमुखतम उपादान मानने वाले छः प्रस्थान उद्भूत हुए हैं।

रस-प्रवर्तक भरतमुनि ने नाट्यकाव्य के संदर्भ में सर्वत्र रस की अनिवार्यता बतायी गयी है - 'न हि रसादृते (ऋ) ~~कश्चिद्दूष्यर्थ~~ कश्चिदप्यर्थः प्रवर्तते।' भरत ने रस) स्थान पर रस के संघटकों को भी निर्दिष्ट किया है - 'विभावानुभाव-व्यभिचारि संयोगाद् रस निष्पत्तिः'

रस के घटक तत्वों के परस्पर संबंध, रस-निष्पत्ति की प्रक्रिया तथा रसोद्भावन को लेकर रस की उत्पत्ति, अनुमिति, अनुमिति, भुक्ति और अभिव्यक्ति के रूप में चार सिद्धान्त उत्तरोत्तर प्रबलतर रूप में विकसित हुए।

काव्य में रस का स्वरूप आनन्द या आस्वाद है, आत्मतत्व का पूर्ण प्रकाश ही आनन्द है, इसलिए किसी काव्य से आनन्द की प्राप्ति का अर्थ है - सहृदय का अन्य मानव (पात्र) से पूर्णतः तादात्म्य पाना। ऐसा तभी संभव है जब विभाव के रूप में किसी मानव का या मानवीकृत पदार्थ का वर्णन हो। सामान्य प्रकृति - वर्णन में रस नहीं रह सकता, पूर्ण आस्वाद का रूप वह नहीं ले सकता। इसीलिए रस को काव्यात्मा मानने पर बहुत से वाक्य काव्य की सीमा से बाहर हो जाएँगे, भले ही उन्हें परम्परा से काव्य कहा गया हो। रस की सत्ता काव्य को उत्कृष्ट अवश्य बनाती है, संज्ञा प्रदान करती है। ध्वनि - काव्य का उत्कर्ष रसध्वनि में है किन्तु रस के अभाव में भी काव्य होता है।

Contd.

Uma Pandey
Deptt. of Skt.
B.A. III yr.
(Content)

Scanned with CamScanner